Vagdhara: A Multilingual Peer Reviewed Research Journal (ISSN 2839-6197)
Vol. 1 No. 3 (2026): April-June; Website: https://vagdhara.in/index.php

'पानी के प्राचीर' उपन्यास में ग्रामीण परिवेश के विविध आयाम

***आशुतोष मणि त्रिपाठी**

*शोधार्थी, हिंदी विभाग, टि. डी. बी. कॉलेज रानीगंज (काज़ी नज़रूल विश्वविद्यालय), रानीगंज, पश्चिम बंगाल

Received: September 20, 2026 *Accepted: November 07, 2026*

शोध सार

रामदरश मिश्र का रचना संसार बहुत समृद्ध रहा है। स्वातंत्र्योत्तर जिन हिंदी साहित्यकारों ने साहित्य को उसकी चाई तक पहुंचाया, उसमें मिश्र जी भी उनके साथ खड़े मिलते हैं। इन्होंने विपुल साहित्य की रचना की है। मिश्र जी की पसंदीदा विद्या 'कविता' रही है। इसके अलावा भी उपन्यास, कहानी, निबंध इत्यादि साहित्य की अन्य विधाओं में भी गहरी पैठ दृष्टिगोचर होती है। विशेषकर उपन्यास क्षेत्र में इन्होंने गांव के सूक्ष्म से सूक्ष्म सिरों को बहुत खूबसूरती से चित्रित किया है।

बीज शब्द : ग्रामीण यथार्थ, लोकगीत, संस्कृति, बेरोजगारी, भ्रष्ट शिक्षा-व्यवस्था, गरीबी, नारी का सशक्त रूप, किसान मजदूर।

भारत गांवों का देश है। जहां आज भी देश की एक बड़ी आबादी निवास करती है। गांव को देश की आत्मा कहा जाता है। एक समय गांधी जी ने अह्वान किया था कि "बैक टू द विलेज" अर्थात गांव की ओर चलो। गांव की तरफ लौटने का अर्थ अपने सांस्कृतिक विरासत, अपने तीज-त्योहार, घर और अपनापन की ओर लौटना है। जिसे आज तक ग्रामीण लोग परंपरा से निर्विघ्न करते आए हैं। किंतु प्रकृति की गोद में बसने वाले हमारे गांव चिरकाल से ही तमाम प्रकार की समस्याओं, परंपराओं और रूढ़ियों का भार ढोते हुए अज्ञान, अशिक्षा तथा अंधविश्वासों के कारण प्रगति की दौड़ में सदैव पीछे ही रहा है।

ग्राम या अंचल को विषय बनाकर साहित्य रचना करने वालों में फणीश्वर नाथ 'रेणु' का नाम अग्रणी रूप से लिया जाता है। उन्होंने उपन्यास 'मैला आंचल' में बिहार के पूर्णिया जिले के मेरीगंज को पिछड़े गांवों का प्रतीक मानकर वहां के जन-जीवन का आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक स्वरूप चित्रित करने का अत्यंत सफल प्रयास किया है।

रामदरश मिश्र ने भी प्रेमचंद और रेणु की परंपरा को आगे बढ़ते हुए गांव का सूक्ष्म रूप से अंकन किया है। इन्होंने गांव के आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक पक्ष को बड़े यथार्थ ढंग से रखा है। मिश्र जी के अंदर बसा गांव दूर शहर में रहने के बावजूद भी उनसे छूट नहीं सका। वे कहते हैं कि "मेरा गांव न जाने कितने स्तरों में मुझमें हैं, न जाने कितने स्तरों पर उसने मेरा निर्माण किया है, न जाने उसके वर्तमान और अतीत की कितनी जीवन धाराएं मुझमें जाने-अंजाने अपना वेग और प्रभाव छोड़ती गई हैं। न जाने उसके जीवन की बीहड़ जंगल में जीवित चरित्रों के कितने पेड़ खड़े थे जो मेरे अनुभवों में और मेरे रचना-जगत में समाते गए हैं।"[1]

'पानी के प्राचीर' 1961 में लिखा रामदरश मिश्र जी का पहला उपन्यास है। जो स्वतंत्रता प्राप्ति की आशावादिता उजागर करता है। इस उपन्यास की विषयवस्तु गोरखपुर प्रांत के एक छोटे से गांव पांडेपुर को बनाया है। जो चारों तरफ से पानी के प्राचीरों से घिरा हुआ है तथा प्रत्येक दृष्टि से अभावग्रस्त होने के साथ इसमें वर्ग संघर्ष की चेतना भी परिलक्षित होती है।

इसलिए महावीर सिंह चौहान कहते हैं कि 'पानी के प्राचीर' एक पिछड़े हुए अंचल के अभावग्रस्त लोगों के जीवन की इसी उम्मीद की रचनात्मक तलाश है, व्याख्या भी।"[2]

'पानी के प्राचीर' के माध्यम से यह ज्ञात होता है कि मिश्र जी जिस छोटे से भौगोलिक क्षेत्र को विषय बना कर उसका सृजन करते हैं और जिन समस्याओं को उठाते हैं, वह महज उस गांव तक ही सीमित नहीं रह जाती बल्कि उसका फलक कब विस्तृत होकर पूरे देश की समस्या बन जाती है अर्थात् उपन्यास में घटित घटनाओं का दर्द कब देश का दर्द बया करने लगता है यह सिर्फ पाठक ही समझ पाता है। मिश्र जी ने गांव के सिर्फ मनोरम

दृश्यों को ही नहीं खींचा है बल्कि गांव के हर अच्छे-बुरे पहलुओं को बड़े सूक्ष्म यथार्थ के साथ दिखाया है। इन्होंने समाज के प्रत्येक तपके के लोगों को वैसे ही चित्रित किया है, जैसा इन्होंने देखा या महसूस किया।

मिश्र जी का बचपन से ही त्योहारों के प्रति विशेष आकर्षण रहा है। वे त्योहारों के समय अपने गांव को नहीं भूल पाते हैं। पानी के प्राचीर उपन्यास की शुरुआत होलिका दहन के उत्सव के साथ ढोलक की थाप ' डोडी डिम्मक डीडी डिम्मक जल भरी जमुना जी की तीर निहारती बाला'[3] से होती है जिसमें सभी छोटे-बड़े, अमीर-गरीब अपना सभी दुःख भूल कर होलिका दहन में नाच-कुद करते हुए उत्सव मना रहे हैं और होली का उत्सव बीत जाने के बाद चैत की नवरात्रि शुरू हो जाती है। रात भर नगाड़ों की आवाज डिम-डिम करती रहती है। नीम की हरी डालियों पर देवी शीतला माई मानो झूला झूल रही होती हैं और ग्रामवासी विशेषकर महिलाएं शीतला माई का गीत रात भर गाती रहती हैं। मिश्र जी लिखते हैं की "नवरात्रि की आखिरी रात है डिम डिमाहट से सारी रात उन्नीदी हो रही है। लगता है कि हर पेड़ पर, हर मोड़ पर, हर सुनसान रास्तों पर, भूतों के, देवताओं के चेहरे झांक रहे हैं। ओझों सोखों की बन आई है" और महिलाएं गाती हैं-"निबिया के डरिया मईया झुनेली हिंडोलवा कि झुल्लि-झुल्लि ना मईया मोरी गावेली गौतिया कि झुल्लि-झुल्लि ना"[4]

गांवों में पुरुष नौकरी के कारण शहरों में रहते हैं और जब वे त्योहारों में भी किसी कारण से घर नहीं आ पाते तो चिरहणी नायिका गीत के माध्यम से अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करती है-"आ गइलें चैत महिनवा हो रामा कि सड़यां नाहीं अइलें"[5]

'पानी के प्राचीर' उपन्यास में लोकगीत के प्रयोग और उसकी कसावट ने जीवंतता ला दी है। जो कि त्योहारों, ऋतुओं इत्यादि के माध्यम से देखा जा सकता है।

रामदर्श जी भले ही शहर में रहते हैं किंतु वह अपने उपन्यासों में गांव से शहर और शहर से गांव की यात्रा करते हैं। गांव के अभावग्रस्त भरे जीवन को कभी भूल नहीं पाये। उनके उपन्यासों में कृषक जीवन का यथार्थ वर्णन देखा जा सकता है। मिश्र जी ने उपन्यास के आरंभ में लिखा है- "युगों से 'राप्ती' नदी के प्रकोप और अपने अभावों के असूझ अंधकार से जीवट के साथ जूझती हुई जनता को समर्पित ।"[6] अपने भौगोलिक परिस्थिति के कारण 'पांडेपुर' गांव सभी तरह की सुविधाओं से वंचित रहा है। इसका एक बड़ा कारण 'राप्ती' और 'गोर्षे' नदियां हैं। जिसके कारण यह गांव सभी सूत्रों से कटा हुआ है और यह अपने आप में ही एक संसार बन गया है।

स्वातंत्रोत्तर काल में शिक्षा का प्रचार-प्रसार बहुत महत्वपूर्ण था। इसलिए नए-नए स्कूल खोले गए लेकिन ग्रामीण अंचलों में शिक्षण संस्थानों में अत्यवस्था तथा समुचित सुविधाओं का अभाव शिक्षा क्षेत्र में राजनीति के हस्तक्षेप से शिक्षक कर्म हमेशा प्रभावित होता रहा है। 'पानी के प्राचीर' उपन्यास में पांडेपुर गांव के नेताओं द्वारा अंग्रेजी स्कूल खोला जाता है और उसकी व्यवस्था का काम बाबू गजेंद्र सिंह और हरदेव राय देखते हैं। हरदेव राय अपने साले को इंग्लिश विषय पढ़ाने तथा हेड मास्टर का पद संभालने के लिए नियुक्त करते हैं। जो खुद बी. ए. में फेल रहता है। स्कूल की आर्थिक व्यवस्था चंदा और बच्चों की फीस पर निर्भर करता है। जो लंबे समय से न मिलने के कारण स्कूल को बंद करना पड़ जाता है।

उपन्यास का नायक 'नीरू' प्राइमरी स्कूल की मास्टरी के चुनाव के लिए गोरखपुर जाता है, जहां उसे अपने सनद के फर्स्ट क्लास होने के कारण विश्वास रहता है कि उसका चुनाव शिक्षक के रूप में हो जाएगा लेकिन मिलिंद, नीरू से कहता है- "मगर किसी की सिफारिश भी मिटाई है?"[7] और कुछ दिनों बाद जब लिस्ट में नीरू का नाम नहीं आता तो वह दुखी हो जाता है। रमेश कहता है- "अरे भाई कैसा अन्याय है? कि बहुत से थर्ड क्लास लोग लिए गए और फर्स्ट क्लास को नहीं लिया गया।"[8] अतः सिफारिश के बिना कुछ नहीं होता है।

बेकारी हमारे देश की सबसे गंभीर समस्याओं में प्रमुख है। जो आंशिक एवं पूर्णकालिक दोनों रूपों में मौजूद है। जिसका प्रमुख कारण भ्रष्ट शिक्षा व्यवस्था, जनसंख्या वृद्धि, मशीनीकरण, पिछड़ी कृषि व्यवस्था, तकनीकी के क्षेत्र में पिछड़ापन आदि हैं। 'पानी के प्राचीर' उपन्यास में उत्पन्न बेकारी को केंद्रित करते हुए डॉक्टर धर्मेंद्र नाथ श्रीवास्तव लिखते हैं-"रामदरश मिश्र पानी के प्राचीन उपन्यास के पांडेपुर गांव की सामुदायिक विघटन बेकारी से उत्पन्न आर्थिक विसंगतियों के कारण होता है। गांव के अधिकांश सदस्य गांव में भरपेट भोजन के अभभाव में कोयलरियों के मजदूर बनते हैं, वैराग्य धारण करते हैं अथवा भिखारवृत्ति अपनाते हैं, पांडेपुर गांव के हैं।"[9]

मिश्र जी के उपन्यास में किसान मजदूरों का पीड़ा बोध कुरुण रूप में उभर कर आया है। कथानायक 'नीरू' की इच्छा न होने के बावजूद उसे राय साहब के वहां नौकरी करनी पड़ती है। राय साहब सड़क बनवाने का काम कर रहे थे। जहां उनकी सख्त हिदायत थी कि मजदूरों से डांट-डपटकर काम निकलवा लेना है। अगर कोई महिला अपने बच्चों को दूध पिलाने लगती है तो मेठ उसको भद्दी-भद्दी गालियां सुनाता है, तो मां अपने बच्चों को छोड़कर वहीं काम करने लग जाती है। राय साहब द्वारा मजदूरों और गरीबों पर बहुत अत्याचार किया जाता है। वह नीरू से कहते हैं-सख्ती से कम लो! यह सब नमक हराम हैं। उन्हें घंटे भर में दस बार प्यास लगती है, बीस बार बच्चा रोता है, चालीस बार कांटा गड़ता है पैरों में। उनकी नस-नस पहचानों

और इन हरामजादों को एक मिनट की भी छुट्टी ना दो। पैसे लेते हैं कोई मजाक थोड़े ना है।"[10] राय साहब की मानसिकता यह है कि मजदूरों से अधिक से अधिक काम निकलवाना श्रमिकों के शारीरिक शोषण की प्रवृत्ति को दर्शाता है।

प्रकृति का रूप दिखने में जितनी ही मनोहारी होती है उसका वीभत्स रूप उतना ही भयंकर होता है। 'पानी के प्राचीर' उपन्यास में कछार क्षेत्र में रहने वाले लोग बारिश के समय में अपने-अपने घरों में रात-रात भर बाढ़ के भय से जागते हैं। किसान को प्रकृति अपने आशीर्वाद से जितना भर देती है, वहीं बाद में बाढ़ से सब कुछ नष्ट भी कर जाती है। जिस वेदना को किसान लोकगीत के माध्यम से व्यक्त करता है। लंबे समय के बाद बारिश के आने से धरती से साँधी-साँधी सुगंध चारों तरफ फैल जाती है। धान, मक्के, बाजरे, कौंदों के फसलों को देख किसान आनंदित होता है। फिर भी यह सुंदर फसल बाढ़ छीन न ले इसका उनको डर है। लहलहाती फसलों को देखकर किसानों का विरह फूट पड़ता है -

"एक बेर अवत बालू फेरो चलि जड़ित आरे रामा
धड़ले चुनरिया मुरझाए ए हरी।"[11]

पानी के प्राचीर में नारी का रूप बड़े सशक्त रूप में उभर कर आया है जब मुखिया को पता चलता है कि उसके बेटे महेश की पिटाई, नीरू ने की है तो वह नीरू को पीटने उसके घर जाते हैं। जहां नीरू के पिता सुमेश पांडे अपने बेटे की शिकायत पाकर उसको पीटने लगते हैं, तभी उनकी पत्नी रूप उनका विरोध करती हुई कहती है-"जवान बेटे पर हाथ छोड़ते हुए शर्म नहीं आती? जिंदगी भर नामर्द बने रह गए। हर एक आदमी के आगे तुम दबते फिरे, जमीन-जमादाद छोड़ते गए। बाल-बच्चों को नामर्दी का पाठ पढ़ाते हो? और बड़े आए हैं मुखिया। जरा घर में घुसकर मारे तो देखें। ऐसा दीदा तो हमने देखा ही नहीं। अपने बेटे को मना काहे को करेंगे, बहुत शरीफ है न वह। लुच्चा कहीं का।"[12]

उपन्यास में उच्च वर्ग के लोगों की कलई एक हरिजन लड़की खोलती है। जब ब्राह्मण बैजू का संबंध हरिजन बंदिद्या के साथ बताते हुए, उसका घर यह कह कर जला देते हैं कि वह सभ्यता के लोगों को अपवित्र तथा पथभ्रष्ट कर रही हैं। तब बंदिद्या अपनी मर्यादा की रक्षा के लिए गांव के एक-एक सभ्य लोगों की पोल खोलती हुई कहती है कि "यह देखिए महेश बाबू हैं, मुखिया बाबू को इन पर बड़ा नाज है। यह अपना सर मेरे पैरों पर रगड़कर कितनी बार प्रेम की भीख मांग चके हैं... बेनी काका का छोकरा सरकने की ताक में था कि बंदिद्या उसके सामने पहुंच गई। मिलते ही आंख मारते हैं, वह फूहड़पन से मुस्कुराते हैं।"[13] स्त्री का सबल रूप मिश्र जी अपने उपन्यास 'पानी के प्राचीर' में चित्रित करते हैं जिसके द्वारा वह समानता का बीज बोना चाहते हैं।

'पानी के प्राचीर' रामदाश मिश्र की एक ऐसी सशक्त रचना है, जिसमें फणीश्वर नाथ 'रेणु' की भाषा में कहे तो इसमें 'फूल और शूल' दोनों देखने को मिलता है। उपन्यास में ग्राम की जितनी सुंदरता का वर्णन मिलता है, वही सुंदरता के पीछे छिपे कुरुपता का भी दर्शन मिलता है, तीज-त्योहार तथा लोकगीतों का वर्णन जहां मिलता है, वहीं त्योहारों की आड़ में फूहड़पन को देखा जा सकता है। जहां आपसी प्रेम देखने को मिलता है वहीं हिंसा की भावना को भी देखा जा सकता है।

यह कहा जा सकता है कि रामदाश मिश्र ने 'पानी के प्राचीर' उपन्यास में गागर में सागर भरने का कार्य किया है। चाहे वह विषय-वस्तु की दृष्टि से हो या परिवेशगत दृष्टि से हो या चरित्र-योजना की दृष्टि से हो। संपूर्ण उपन्यास अपने वैश्विक को लिए हिंदी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत हुआ है। जिसे जो भी पढ़ता है और जितना ही आगे पढ़ते जाता है, वह उपन्यास में उतना ही धंसता चला जाता है और उसे ऐसा महसूस होने लगता है जैसे वह पढ़ नहीं रहा बल्कि उसे जी रहा हो। उपन्यास में मिश्र जी ने ग्रामीण जीवन के विविध पहलुओं को जिसमें पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक आदि विभिन्न बिंदुओं का सूक्ष्म रूप से चित्रण किया गया है।

संदर्भ

1. जहां मैं खड़ा हूं, रामदरश मिश्र रचनावली, नमन प्रकाशन , प्रथम संस्करण 2000,पृष्ठ सं.-79,
2. रामदरश मिश्र की सृजन-यात्रा, महावीर सिंह चौहान, वाणी प्रकाशन, द्वितीय संस्करण 2009, पृष्ठ सं. -82
3. पानी के प्राचीर, रामदरश मिश्र रचनावली, नमन प्रकाशन , प्रथम संस्करण 2000, पृष्ठ सं. -03
4. वही, पृष्ठ सं.- 28
5. वही, पृष्ठ सं.- 19
6. पानी के प्राचीर, भूमिका, रामदर्श मिश्र
7. पानी के प्राचीर, रामदर्श मिश्र, नमन प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2000, पृष्ठ सं.-81

8. वही, पृष्ठ सं. -86
9. हिंदी उपन्यासों में सामाजिक विघटन, डॉ. धर्मदनाथ श्रीवास्तव, उमेश प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1995, पृष्ठ सं.-115
10. पानी के प्राचीर, रामदर्श मिश्र रचनावली,नमन प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2000, पृष्ठ सं.-88
11. वही, पृष्ठ सं.- 82
12. वही, पृष्ठ सं.- 26
13. वही, पृष्ठ सं.-60

■■■